धन्यवाद !

इस ट्रैक्ट के प्रकाशन में श्रीमान् ला० जैनीलाल जी कागजी प्रोप्राइटर अलेक्ट्रकस इञ्जिनियरिंग वर्क्स चावड़ी बाजार देहली से १५) रु० सहायता प्राप्त हुई है। अतएव उनकी इस कृपा और दानशीलता के लिए कोटिशः धन्यवाद।

मंत्री,

जैन मित्र मण्डल, धरमपुरा देहली।

मिथ्यात निषेध

या

सच्चा श्रद्धा

मानव जन्म बहुत ही कीमती है। बहुत बड़े पुण्य के उदय से यह जन्म मिलता है ऐसे जन्म को पाकर वही मनुष्य अपना कर्तव्य पालता है जो अपने जीवन को धर्मानुकूल बिताने का उद्यम करता है। धर्म से ही जीव का भला होता है। अधर्म से जीव का बुरा होता है। धर्म के फल से ही तीर्थकर, चक्रवर्ती, नारायण, प्रति नारायण, बलभद्र, कामदेव, महामण्डलेश्वर, मंडलेश्वर, महाराजा राजा, नगरसेठ आदि के उच्चपद प्राप्त होते हैं। धर्म के ही फल से धन होता है, सुन्दर शरीर होता है, शरीर में बल होता है, अपना अधिकार होता है, जगत में यश होता है, धर्म के ही फल से सुन्दर मकान, बढ़िया कपड़े, सोफियाने गहने, सोने चाँदी के बर्तन आदि मिलते हैं, धर्म ही से शरीर निरोग रहता है, दीर्घ आयु होती है, इष्ट पदार्थों के भोग खान पानादि प्राप्त होते हैं, धर्म ही के फल से पुरुषों को मन मोहनेवाली स्त्री व स्त्रियों को मन मोहने वाले पति का लाभ होता है, धर्म ही के प्रताप से आज्ञाकारी पुत्र पुत्री नौकर चाकर मिलते हैं, धर्म ही के कारण जीवन भर दारिद्र नहीं सताता है, जिन्दगी के दिन साता से बीतते हैं, धर्म ही के फल से श्रेष्ठकुल में जन्मता है जहां बिना अधिक मिहनत के धन मिल जाता है, और अपना

समय धर्म साधन के लिये निकाला जा सका है। धर्म ही के प्रताप से म्लेच्छ खंड में जन्म करके आर्य खंड में जन्म होता है, धर्म ही की महिमा से सच्चे साधुसंतों का, सच्चे धर्म का, सच्चे देव का समागम मिलता है, धर्म ही के फल से इन्द्र, धरणेन्द्र- लोकपाल, लौकांतिक देव, अहमिन्द्र, सुन्दर देव, देवी का शरीर मिलता है, धर्म का ही यह प्रताप है जो देव गति मिलती जिसमें शरीर में रोग नहीं होते न मनुष्यों के समान भोजन पान करना पड़ता है, उनको जब भूख लगती है तब उनके कंठ में अमृत झड़ जाता है, धर्म ही के फल से देव देवियों की आयु बहुत बड़ी होती है वे इच्छित भोग भोगते हैं। धर्म ही के प्रताप से यह जीव भोग भूमि में जाता है जहां युगलिये पैदा होते हैं कल्पवृक्षों से मन माने भोग मिल जाते हैं, यहां दीर्घ काल तक संतोष से जीवन बीतता है, कहा है—धर्मः सुखस्य हेतुः अर्थात् सुख का उपाय धर्म है। जगत् में जितने प्राणी कुछ सुखी देखने में आते हैं सो सब धर्म का फल है।

अधर्म दुखों का मूल है। अधर्म या पाप के फल से नीच कुल में जन्मता है, गर्भ में आते ही मर जाता है या थोड़ी आयु पाकर मर जाता है। बदसूरत, रोगी, धन हीन, बलहीन, अन्धा, काना, बहिरा, गूँगा, कुबड़ा, बौना, लूला लंगड़ा, सर्व पाप के फल से होता है। पाप के फल से धन जितना चाहो मिलता नहीं विवाह नहीं हो पाता है। यदि कदाचित् होता भी है तो स्त्री जल्दी मर जाती है। पुत्र पुत्री होते नहीं, यदि होते हैं तो मर जाते हैं, गहना कपड़ा चाहने पर भी नहीं मिलता है। पाप के फल से स्त्री का व पति का वियोग होजाता है, पाप के कारण दुर्वचन सुनने को मिलते हैं, कोई अपनी बात नहीं पूछता है, पद पद पर अपमान सहना पड़ता है, धन नाश हो जाता है, राज छूट जाता

है, कुल का नाश हो जाता है। सारा जीवन रोगी बना रहना पड़ता है, घर में पैसा होते हुए भी भोग नहीं भोगे जा सकते हैं। पाप के फल से ही खर्च के लायक धन नहीं मिलता है बड़ी कष्ट की नौकरी करनी पड़ती है, सरदी के मौसम में भी पहनने को कपड़ा नहीं मिलता है। पाप के फल से ही पशु गति मिलती है, पशु में एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक पांच प्रकार के जीव होते हैं।

एकेन्द्रिय जीव पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पति काय (वृक्षादि) में होते हैं—इन विचारों का छूने से ज्ञान होता है छूने ही के द्वारा ये घोर दुख सहते हैं—मिट्टी को खोदते हुए, रौंदते हुए, हल चलाते हुए, पानी को कुचलने, नहाने, ढोलते, सींचते, गर्म करते हुए आग को बुझाते हुए दाबते हुए, हवा को धक्का देते हुए, पंखा चलाते हुए, दरख्तों को काटते हुए, तोड़ते हुए, चूँटते हुए, फलादि को बिनारते हुए, गर्म पानी में डालते हुए, महान् दुःख होता है वे अपने दुःख को मुंह से कह भी नहीं सक्ते हैं। दो इन्द्री जीव लट, संख सीप आदि, तेइन्द्री जीव चींटी, खटमल, जूं आदि चौइन्द्री जीव मक्खी, मच्छर, पतंगे आदि गर्मी सर्दी से, दबने से, आग से, हवा से, वर्षा से, सबलों द्वारा खाए जाने से महान कष्ट भोगते हैं ये सब उनके ही पाप का फल है। पंचेइन्द्रिय पशुओं में ऊंट, हाथी, घोड़ा, बैल, गाय, भैंस हिरण, भेड़, बकरी, कुत्ता, बिल्ली, सूकर, मोर, कबूतर, मुर्गा, मछली, मछ, मगरमच्छ, आदि जानवर बहुत कष्ट पाते हुऐ दिखलाई पड़ते हैं। सबल निर्बलों को सताते हैं मानव समाज कसाई खानों में इनकी हत्या करता है वे तड़फ २ कर मरते हैं। अधिक बोझा लादे जाने का कष्ट सहते हैं, कोड़ों की, लकड़ियों की, अंकुश की मार सहते हैं। जिनके पालने वाले नहीं होते हैं वे

पेट भर खाने को बड़ी कठिनता से पाते हैं पशुगति के घोर दुःख पाप कर्म के ही फल हैं।

यदि नरक गति का विचार करें तो नरक में दीर्घ काल तक इस प्राणी को रह कर भूख प्यास से तड़फते हुए छेदन भेदन, मारन ताड़न के जो भयानक कष्ट सहने पड़ते हैं सो सब पाप का ही फल है।

इस जगत में सब सुख दुःख कर्मों ही का फल है। पुण्य कर्म से साता पाप कर्म से असाता होती है। श्री अमृतचंद्र आचार्य समयसार कलश में कहते हैं—

सर्वं सदैव नियतं भवति स्वकीय-
कर्मोदयान्मरणजीवित दुःख सौख्यम्।
अज्ञानमेतदिह यत्तु परः परस्य-
कुर्यात्पुमान् मरण जीवित दुःख सौख्यम् ॥६॥

भावार्थ—सर्व ही संसारी जीवों को अपने ही कर्मों के फल से मरना, जीना दुःख व सुख होता है यह बात निश्चय है। यह मानना अज्ञान है कि कोई मानव या देव किसी को मरण, जीवन दुःख, सुख कर डालेगा जब तक उसके कर्म का उदय न हो बिना अपने ही पुण्य के उदय के कोई सुख नहीं पा सक्ता। बिना अपने ही पाप के उदय के कोई दुःख नहीं पा सक्ता है।

श्रीगुणभद्राचार्य आत्मानुशासन में कहते हैं—

पापाद् दुःखं धर्मात्सुखमिति सर्वजनसुप्रसिद्ध मिदम्।
तस्माद्विहाय पापं चरतु सुखार्थी सदाधर्मम् ॥ ८ ॥

भावार्थ-पाप से दुःख होता है, धर्म से सुख होता है, यह बात

सब लोक में मशहूर है। सब लोगों को विदित है इस लिये जो सुख को चाहता है उसे सदा पाप को छोड़ कर धर्म पर चलना चाहिये। और भी कहा है:—

सुखितस्य दुःखितस्य च संसारे धर्म एव तव कार्य्यः
सुखितस्य तदभिवृद्धयै दुःखभुजस्तदुप घातय॥ १८ ॥

भावार्थ—इस संसार में सुखी व दुःखी हर एक को धर्म करते रहना चाहिये, सुखी जीव का सुख बढ़जायेगा तथा दुःखी जीव का दुःख नाश हो जायेगा।

धर्मारण्य तरूणां फलानि सर्वे न्द्रियार्थ सौख्यानि।
संरक्ष्य तांस्तत स्ता न्युचिनु यैस्तै रुपा यैस्त्वम् ॥१६॥

भावार्थ—हे भाई धर्म रूपी बाग के वृक्षों के फल ही ये सब इन्द्रियों के सुख हैं इसलिये तुझे चाहिये कि अच्छे अच्छे उपायों को करके तू धर्म रूपी वन के वृक्षों की रक्षा कर।

बहुत से प्राणी ऐसा सोचते हैं कि अब तो लक्ष्मी है। भोग हैं, खूब भोग करलेना चाहिए। धर्म को कौन पाले--पीछे देखा जायेगा जो ऐसा सोचते हैं वे बड़े मूर्ख हैं—उनके लिये वे ही आचार्य कहते हैं—

धर्माद वाप्त विभवो धर्म प्रतिपान्य भोग मनु भवतु।
बीजादवाप्त धान्यः कृषी वलस्तस्य बीजमव ॥२१॥

भावार्थ—हे प्राणी ! यदी तुझे संसार के भोगों से वैराग्य नहीं हुआ है और तू भोग भोगना ही चाहता है तो धर्मको पालते हुये भोगों को भोग। क्यों कि वर्त्तमान में तुझे ये भोग धर्म के फल से ही प्राप्त हुए हैं जैसे किसान बीज बोकर धान्य पाता है

फिर भी बीज को बोता है और भोगता भी है—यदि फसल के लिये बीजों को किसान न बोवे ... उसे ...
कर भूखा मरना पड़े। इसी तरह यदि तू अब धर्म नहीं
आगे दुःख ही भोगेगा—नरक व पशु गति में जाकर
कष्ट पाएगा। इसलिए चतुर नर नारी को उचित है
जन्म को धर्म पाल कर सफल करें और पापों

यह मानव का देह काने ईख के समान
नहीं है—किन्तु बोने योग्य है—जैसे काने ...
नहीं मिलता वैसे इस नर देह को अंध हो ...
इन्द्रिय भोगों का भी वैसा स्वाद नहीं ...
आता है किन्तु इस देह को धर्म साधन में
से स्वर्ग व मोक्ष का लाभ हो सकेगा—अ...

पाप क्या है व सब से बड़ा धर्म
तो मालूम होगा मिथ्यात्व के बराबर

के समान धर्म नहीं है। जगत् में ...
मांस खाना, चोरी करना, शिकार खेलना
सेवना, झूठ बोलना, ईर्षा करना, हिंसा
करना, मायाचार करना, लोभ करना,
की लम्पटता से अभक्ष्य खाना, दूसरों
देना, बकवाद करना, शरीर की खोटी
शोक करना, मारना, काटना, कष्ट देना,
रखना, ठग लेना, विश्वास घात करना,
अंग उपंग छेदना बन्धन में डाल देना,
गवाही देना, अमानती माल को झूठ बोल
माल खरीदना, चोरी कराना, कमती बढ़ी

कह कर मिलावटी माल बेचना, वेश्या नाच देखना, खोटी कथाएं पढ़ना, खोटा सिनेमा नाटक देखना, झूठा मुकदमा करना, मान खंडन करना, पर की निन्दा करना, अपनी शेखी मारना, कलह करना, कठोर बचन बोलना, धन संग्रह करके कृपणता रख कर दान में न लगाना आदि अनेक पाप हैं। परन्तु ये सब पाप मिथ्यात्व के पाप से छोटे हैं। मिथ्यात्व के समान जगत में कोई पाप नहीं है। मिथ्यात्व के ही फल से जीव निगोद जाता है एकेन्द्रियादि असैनी पँचेन्द्रिय होता है, नर्क धरा में जा कर दुःख उठाता है—दरिद्री रोगी, अंगहीन मानव होता है। स्त्री का शरीर पाता है, महान दुःखी कुत्ता, बिल्ली, शेर, चीता, हाथी, ऊँट, बैल, मुर्गा, भेड़, बकरी, मच्छ आदि होता है मिथ्यात्व के ही फल से भवनवासी, व्यंतर भूत प्रेत, ज्योतिषी आदि नीच देव होता है मिथ्यात्व ही भव वन में अनंत काल भ्रमण कराने वाला है मिथ्यात्व के समान इस जीव का कोई वैरी नहीं है। श्रीसमंतभद्राचार्य रत्नकरण्ड श्रावकाचार में कहते हैं—

न सम्यक्त्व समं किंचित् त्रैकाल्ये त्रिजगत्यापि ।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्व समं नान्यत्तनू भृताम् ॥३४॥

भावार्थ—तीन काल भूत भविष्य वर्तमान में व तीन जगत में सम्यक्दर्शन के समान कोई प्राणियों का कल्याणकारी धर्म नहीं है और मिथ्यात्व के समान कोई इनका बुरा करने वाला पाप नहीं है श्रीकुलभद्राचार्य सार समुच्चय में कहते हैं—

मिथ्यात्वं परमं बीजं संसारस्य दुरात्मनः ।
तस्मात्तदेव मोक्तव्यं मोच सौख्यं जिघृक्षुणा ॥५२॥

भावार्थ—मिथ्यात्व ही इस दुःखमई संसार का बड़ा बीज है

फिर भी बीज को बोता है और भोगता भी है-यदि आगाड़ी फसल के लिये बीजों को किसान न बोवे तो उसे पीछे दरिद्री हो कर भूखा मरना पड़े। इसी तरह यदि तू अब धर्म नहीं करेगा तो आगे दुःख ही भोगेगा—नरक व पशु गति में जाकर जन्म जन्म कष्ट पाएगा। इसलिये चतुर नर नारी को उचित है कि इस नर जन्म को धर्म पाल कर सफल करें और पापों को छोड़ें।

यह मानव का देह काने ईख के समान असल में भोगने योग्य नहीं है—किन्तु बोने योग्य है—जैसे काने साठे को चूसने से रस नहीं मिलता वैसे इस नर देह को अंध होकर भोगों में लगाने से इन्द्रिय भोगों का भी वैसा स्वाद नहीं आता है जैसा देवों को आता है किन्तु इस देह को धर्म साधन में लगा दिया जाय तो इस से स्वर्ग व मोक्ष का लाभ हो सकेगा—जगत् में सब से बड़ा पाप क्या है व सब से बड़ा धर्म क्या है यदि विचार करोगे तो मालूम होगा मिथ्यात्व के बराबर पाप नहीं है सम्यक्त्व के समान धर्म नहीं है। जगत् में जुआ खेलना, मदिरा पीना, मांस खाना, चोरी करना, शिकार खेलना, वेश्या सेवना, पर स्त्री सेवना, झूठ बोलना, ईर्षा करना, हिंसा करना, क्रोध करना, मान करना, मायाचार करना, लोभ करना, काम भोग करना, इंद्रियों की लम्पटता से अभक्ष्य खाना, दूसरों का बुरा विचारना, गाली देना, बकवाद करना, शरीर की खोटी चेष्टा करना, हंसी करना, शोक करना, मारना, काटना, कष्ट देना, किसी को भूखा प्यासा रखना, ठग लेना, विश्वास घात करना, अधिक बोझा लादना, अंग उपंग छेदना बन्धन में डाल देना, झूठा कागज लिखना झूठी गवाही देना, अमानती माल को झूठ बोल कर ले लेना, चोरी का माल खरीदना, चोरी कराना, कमती बढ़ती तौलना, नापना, सच

कह कर मिलावटी माल बेचना, वेश्या नाच देखना, खोटी कथाएं पढ़ना, खोटा सिनेमा नाटक देखना, झूठा मुकदमा करना, मान खंडन करना, पर की निन्दा करना, अपनी शेखी मारना, कलह करना, कठोर वचन बोलना, धन संग्रह करके कृपणता रख कर दान में न लगाना आदि अनेक पाप हैं। परन्तु ये सब पाप मिथ्यात्व के पाप से छोटे हैं। मिथ्यात्व के समान जगत में कोई पाप नहीं है। मिथ्यात्व के ही फल से जीव निगोद जाता है एकेन्द्रियादि असैनी पँचेन्द्रिय होता है, नर्क धरा में जा कर दुःख उठाता है—दरिद्री रोगी, अंगहीन मानव होता है। स्त्री का शरीर पाता है, महान दुःखी कुत्ता, बिल्ली, शेर, चीता, हाथी, ऊँट, बैल, मुर्गा, भेड़, बकरी, मच्छ आदि होता है मिथ्यात्व के ही फल से भवनवासी, व्यंतर भूत प्रेत, ज्योतिषी आदि नीच देव होता है मिथ्यात्व ही भव वन में अनंत काल भ्रमण कराने वाला है मिथ्यात्व के समान इस जीव का कोई वैरी नहीं है। श्रीसँमतभद्राचार्य रत्नकरण्ड श्रावकाचार में कहते हैं—

न सम्यक्त्व समं किंचित् त्रैकाल्ये त्रिजगत्यापि ।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्व समं नान्यत्तनू भृताम् ॥३४॥

भावार्थ—तीन काल भूत भविष्य वर्तमान में व तीन जगत में सम्यक्दर्शन के समान कोई प्राणियों का कल्याणकारी धर्म नहीं है और मिथ्यात्व के समान कोई उनका बुरा करने वाला पाप नहीं है श्रीकुलभद्राचार्य सार समुचय में कहते हैं—

मिथ्यात्वं परमं बीजं संसारस्य दुरात्मनः ।
तस्मात्तदेव मोक्तव्यं मोक्ष सौख्यं जिघृक्षुणा ॥५२॥

भावार्थ—मिथ्यात्व ही इस दुःखमई संसार का बड़ा बीज है

इसलिये जो मोक्ष का सुख चाहते हैं उनको उचित है कि मिथ्या दर्शन का त्याग करें ।

जगत में दया पालना, सत्य बोलना, परोपकार करना, देव सेवा, गुरु भक्ति, शास्त्र पढ़ना, संयम लेना, श्रावक व्रत पालना, साधु का चरित्र पालना, सेवा करना, सम भाव से दुःख सहना विद्या दान देना, आहार दान देना, औषधि दान देना अभय दान देना, देख कर चलना, पानी छान कर पीना, रात्रि भोजन न करना, उपवास करना, एकासन करना, विश्व प्रेम रखना, समता भाव से कष्ट सहना, घोर तप करना, श्री जिन मंदिर बनवाना श्री जिन मंदिर का जीर्णोद्धार करना, विद्यालय स्थापित करना, औषधालय कायम करना, पशुओं को वध से बचाना, समय का सदुपयोग करना, क्षमा भाव रखना, संतोष भाव रखना, कोमल परिणाम रखना, सरलता से व्यवहार करना, मन को पवित्र रखना, ममता का त्यागना, ब्रह्मचर्य का पालना, आदि बहुत से धर्म के अंग हैं परन्तु सम्यग्दर्शन के समान कोई धर्म नहीं है। सम्यग्दर्शन के होने पर और धर्मों का मूल्य है अन्यथा कुछ कीमत नहीं है। श्री गुणभद्राचार्य आत्मानुशासन में कहते हैं—

शम बोध वृत्त तपसां पाषाणस्येव गौरवं पुंसः ।
पूज्यं महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वेन संयुक्तम् ॥ १५ ॥

भावार्थ—सम्यग्दर्शन के बिना शांत भाव, ज्ञान, चारित्र तप आदि धर्मों का मूल्य कंकड़ पत्थर के समान हैं परन्तु सम्यग्दर्शन के साथ में उनका मूल्य महामणि के समान हैं।

श्री कुलभद्राचार्य सार समुच्चय में कहते हैं—

वरं नरक वासोऽपि सम्यक्त्वेन समायुतः ।
न तु सम्यक्त हीनस्य निवासो दिवि विराजते ॥ ३६ ॥

भावार्थ—सम्यग्दर्शन के साथ नरक में भी रहना अच्छा है किन्तु सम्यक्त के बिना स्वर्ग में भी रहना शोभता नहीं है।

और भी कहते हैं—

सम्यक्त्वं परमं रत्नं शंकादि मल वर्जितम्।
संसार दुःख दारिद्र्यं नाशयेत्सुविनिश्चितम् ॥४०॥

भावार्थ—शंका आदि दोषों से रहित सम्यकदर्शन परम रत्न है क्योंकि यही सम्यक्त संसार का दुःख दारिद्र अवश्य नाश कर देता है। और भी कहते हैं—

सम्यक्त्वेन हि युक्तस्य ध्रु वं निर्वाणसंगमः।
मिथ्यादृशोऽस्य जीवस्य संसारे भ्रमणं सदा ॥४१॥

भावार्थ—जो सम्यग्दर्शन सहित है वह अवश्य निर्वाण को पावेगा, जो मिथ्यात्व सहित हैं वह अवश्य संसारमें भ्रमण करेगा

देखो श्री महावीर जी भगवान का जीव श्री रिषभदेव का पोता मारीच था, इसने मिथ्यात्व नहीं छोड़ा इस लिए वह दीर्घ-काल तक संसार में रुलो, करोड़ों जन्म वृक्ष,संख मार्जार, कुत्ते आदि के पाए— जब तक श्री अजित आदि पर्श्वनाथ पर्यंत २२ तीर्थंकर हुए तब तक सागरों वर्षों तक मारीच के जीव को संसार में कष्ट सहना पड़ा, जब इसी जीवको सम्यग्दर्शका लाभ हो गया तब यही जीव १० वें जन्म में श्री महावीर भगवान होकर मोक्ष चला गया।

प्यारे भाइवो और बहनो! इस लिए यदि आप अपना भला करना चाहें, यदि आप को अपने आत्मा का कल्याण करना है, यदि आप संसार के भयभीत कष्टों से अपने को बचाना चाहतेहैं यदि आप सुख शांति पाना चाहते हो, यदि आप संसार में रहते हुए सुख की सामिग्री चाहते हो और दुःख सामिग्री नहीं चाहते

हो तो आपका यह परम् पवित्र कर्तव्य है कि आप मिथ्यात्व रूपी विष को उगालकर फेंकदें और सम्यग्दर्शन रूपी अमृत को पोलें।

अब हम आपको यह बताना चाहते हैं कि मिथ्यात्व क्या है और सम्यक क्या है।

पहले मिथ्यात्व रूपी शत्रु को समझ लीजिए जिस के वश में आप पड़े हैं फिर आपको स्वयं सम्यग्दर्शनका पता लग जायगा।

मिथ्यात्व दो तरह का है एक अग्रहीत, दूसरा ग्रहीत।

अग्रहीत मिथ्यात्व वह है जो अनादि काल से अज्ञानी जीव के साथ चलता चला आया है जैसे छःढाला में पं० दौलतरामजी ने कहा है—

मोह महामद पियो अनादि। भूल आप को भरमत वादि।

इस जीव ने अनादि कालसे मोह रूपी महान् मदिरा का पान कर लिया है इसलिये अपने को भूलकर अपने को और का और मान रक्खा है, यह अज्ञानी प्राणी जिस शरीर में जाता है उस ही को अपना मान लेता है अर्थात् उस ही रूप अपने को मान लेता है तथा शरीर के सम्बन्धियों को अपना हितू व उसेके बिगाड़ करने वालों को अपना शत्रु मान लेता है नरक में जाकर अपने को नरकी, देवगति में जाकर अपने को देव, पशु गति में जाकर अपने को पशु, कुत्ता- बिल्ली, बैल, बकरा, हाथी, ऊँट, घोड़ा, शेर हिरण, मक्खी, चींटी, लट, शंख, वृक्षादि, मनुष्य गति में गया तो अपने को मनुष्य सेठ साहूकार, जमींदार, सिपाही, सेवक, राजा, कृषक आदि मान बैठता है, और जिनका सम्बन्ध पाता है, उनको भी अपना मान लेता है, यह मेरी स्त्री है, ये मेरे पुत्र पुत्री हैं, यह मेरी बहन है, यह मेरे भाई हैं, यह मेरे चाचा हैं, यह मेरे मामा हैं, यह मेरा कपड़ा है, यह मेरा बर्तन है, यह मेरा मकान है, यह

मेरा गहना है, यह मेरा धन है, यह मेरा देश है, यह मेराराज्यहै, इस तरह अहंकार और ममकार में ऐसा फंस जाता है कि रात दिन इस भ्रम में उलझ कर उनके काम किया करता है। आत्मा के हित को भी भूल जाता है—हिंसा, झूंठ, चोरी, विश्वासघात आदि करके भी कुटम्ब के मोह में धन कमाता है भोगों में लिप्त हो जाता है, जब कोई कुटम्बी मरता वह धनादि का वियोग होता है तब हाय करके रोता है, छाती कूटता है जब रोग होता है तब बहुत दुःख मानता है, जब मरने लगता है तब बहुत शोक करता है कि हाय सब नाता टूटा जाता है क्या करूं यदि परिवार की या धन की वृद्धि होती है तो फुला नहीं समाता है, मद में भर जाता है अपने को ऊंचा और दूसरों को नीचा देखता है, बड़ी भारी आकुलता व जंजाल में फस जाता है रात दिन शरीर को, कुटुम्ब की, धन की चिन्ता करते करते परेशान रहता है। आत्मा का हित बिलकुल नहीं याद करता है यही मिथ्यात्व है, गफलत है मोह है। इसे हरएक प्राप्त किए हुए शरीर में यह प्राणी कर लेता है और यह मानना सब झूठा है यह बात विचारने से साफ २ झलकती है। जिस शरीरको हम अपना मानतेहैं वह वह छूट जाता है पुत्र, पुत्री, स्त्री, मित्र आदि आदि सब मतलब के गरजी हैं—अगर उनको मतलब नहीं निकले तब ज़रासी देर में शत्रु बन जातेहैं नीतिकार ने कहा भी है:—

न कोपि कस्यचित् मित्रं न कोपि कस्यचित् रिपुः।
व्यवहारेण जायंते मित्राणि रिप वस्तथा ॥

भावार्थ—न कोई किसी का मित्र है, न कोई किसी का शत्रु है, व्यवहार से ही—मतलब से ही—कोई मित्र व कोई शत्रु बन जाते हैं।

जैसा आप नहीं है वैसा अपने को मानना, जो अपना असल में नहीं है उसको अपना मानना यही अनादि काल का चला आया हुआ अग्रहीत मिथ्यात्व है—यही मोह जाल है। इसी में संसारी प्राणी फँसकर अपने आत्मा के स्वरूप को भूल गया है यही मदिरा है, जिसके नशे में चूर होकर यह न मानने योग्य को अपना मानता है, न करने योग्य कार्य करता है, न बोलने योग्य बोलता है, अपनी इस भूल से आप ही दुःख उठाता है। अपने इस जन्म में भी कष्ट भोगता है मर कर कुगति में जाकर भी दुःख उठाता है। श्री नागसेन मुनि तत्वानुशासन में कहते हैं—

ये कर्मकृता भावाः परमार्थं नयेन चात्मनो भिन्नाः ।
तत्रात्माभिनिवेशो ऽहंकारो ऽहं यथा नृपतिः ॥ १५ ॥

भावार्थ—जो हमारे भाव कर्मों के उदय से होते हैं वे निश्चयनय से हमारी आत्मा के स्वभाव से भिन्न हैं उनको ही आत्मा मान लेने का जो मिथ्या अभिप्राय है उसे अहंकार कहते हैं जैसे मैं राजा हूँ।

शश्वदनात्मीयेषु स्वतनु प्रमुखेषु कर्म जनितेषु ।
आत्मीयाभिनिवेशो ममकारो मम यथा देहः ॥ १४ ॥

भावार्थ—जो सदा ही अपने आत्मा से भिन्न शरीर कुटुम्बादि पदार्थ कर्म के निमित्त से प्राप्त हुए हैं इनमें अपनेपने का मिथ्या अभिप्राय सो ममकार है जैसे यह देह मेरी है।

मिथ्याज्ञानान्वितान्मोहान्ममाहंकार संभवः ।
इमकाभ्यां तु जीवस्य रागोद्वेषस्तुजायते ॥ १६ ॥

भावार्थ—मिथ्या ज्ञान सहित मिथ्यात्व से ही अहंकार ममकार का जन्म होता है, इन ही के कारण जीव के भीतर राग द्वेष पैदा हो जाता है।

ताभ्यां पुनः कषायाः स्युर्नोकषायाश्च तन्मयाः ।
तेभ्यो योगा प्रवर्तन्ते ततः प्राणिवधादयः ॥ १७ ॥

भावार्थ—इन राग द्वेष के कारण क्रोध मान माया लोभ कषाय तथा हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा (घृणा), तथा काम की चाह रूपी नौ कषाय पैदा हो जाते हैं, तब मन वचन काय काम करने लग जाते हैं इन ही की प्रवृत्ति से यह जीव प्राणियों की हिंसा करता है, झूठ बोलता है, चोरी करता है, व्यभिचार सेवता है, अन्याय करता है, परिग्रह का लोभी बनकर कृपण हो जाता है ।

तेभ्यः कर्माणि बध्यन्ते ततः सुगति दुर्गती ।
तत्र कायाः प्रजायंते सहजानीन्द्रियाणि च ॥ १८ ॥

भावार्थ—उन हिंसादि पापों के कारण कर्म बंध जाते हैं, कर्मों के फल से यह जीव देव या मनुष्य की सुगति में या नरक, पशु, की दुर्गति में चला जाता है वहां फिर शरीर और उसके साथ इन्द्रियें पैदा होती हैं ।

तदर्थानिन्द्रियैर्गृह्णन् मुह्यति द्वेष्टि रज्यते ।
ततो बंधो भ्रमत्येवं मोहव्यूह गतः पुमान् ॥ १९ ॥

भावार्थ—उन इन्द्रियों से इनके अच्छे बुरे विषय रूप पदार्थों को गृहण करता है; उनमें फिर मोहित होकर भ्रम में पड़कर उन को अपना मान बैठता है इससे फिर राग द्वेष करता है, तब फिर कर्म बंध होता है इस तरह यह जीव मोह रूपी दुष्ट राजा की सेना के बीच में पड़ा हुआ कष्ट पा रहा है ।

इस अगृहीत मिथ्यात्व को वमन करना उचित है मिथ्या अहंकार ममकार त्यागना उचित है; अपने आत्मा को सिद्ध पर-

आत्मा के समान पूर्ण ज्ञाता दृष्टा, वीतराग, आनन्द मई, अमूर्तीक मानना उचित है।

श्री पूज्यपाद स्वामी इष्टोपदेश में कहते हैं—

स्वसंवेदन सुव्यक्तस्तनुमात्रः निरत्ययः ।
अत्यंत सौख्यवानात्मा लोकालोक विलोकनः ॥ २१ ॥

भावार्थ—यह आत्मा स्वभाव से अविनाशी है, अनन्त आनन्दमय है, लोक अलोक को देखने जानने वाला है, अपने अनुभव द्वारा झलकता है तथा यह आत्म देव अपने शरीर में ही शरीर भर में व्यापक है।

श्री महावीर भगवान, गौतम स्वामी, जम्बु स्वामी, श्रीरामचंद्र श्रीहनुमान, श्रीसुग्रीव, श्रीकुम्भकर्ण, श्रीइन्द्रजीत आदि महान पुरुषों ने मोक्ष पाई है उनका आत्मा परमात्मा हो गया—तब जो कुछ उन परमात्माओं में अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख, अनंत वीर्य, क्षायिक सम्यक्त आदि शुद्ध गुण प्रगट हैं वे सब कहीं से नए नहीं आए हैं किंतु संसारी अवस्था में भी वे सब थे मात्र पाप पुण्य कर्मों से ढके हुए थे—कर्मों के नाश से प्रगट हो गए—बस हम सब को अगृहीत मिथ्यात्व को त्याग कर यह सच्चा श्रद्धा न रखना चाहिए कि हमारे आत्मा का स्वभाव परमात्मा के समान शुद्ध है। न हम स्वभाव से रागी हैं न द्वेषी हैं न क्रोधी हैं न मानी हैं, न मायावी हैं, न लोभी हैं, न भयवान हैं, न कामी हैं, न मनुष्य हैं, न देव हैं, न पशु हैं, न आर्य हैं, न म्लेच्छ हैं, न विद्याधर हैं, न भूमि गोचरी हैं, न राजा हैं, न प्रजा हैं, न स्वामी हैं, न सेवक हैं, न ब्राह्मण हैं, न क्षत्रिय हैं, न वैश्य हैं, न शूद्र हैं, न स्त्री हैं, न पुरुष हैं, न रोगी हैं, न निरोगी हैं, न बालक हैं, न युवा हैं, न वृद्ध हैं, न हम जन्मते हैं, न मरते हैं, न हम काले हैं,

न गोरे हैं, न मीठे हैं, न खट्टे हैं, न हम सुगंधित हैं, न दुर्गंधमय हैं, न हम ठंडे हैं न गर्म हैं, न हम चिकने हैं, न रूखे हैं, न हम हलके हैं, न भारी हैं, न हम कोमल हैं, न कठोर हैं, हम तो मात्र एक शुद्ध ज्ञाता दृष्टा वीतराग आनन्दमय पदार्थ हैं—बस ऐसा सच्चा श्रद्धान होने से कर्म से पैदा हुए भावों में अहंकार मिट जाता है और अपने ही असली स्वभाव में ही अहंपना व अपना पना भासने लगता है।

इसी तरह हमें विश्वास करना चाहिये कि हमारा सम्बन्ध न शरीर से है न माता से हैं न पिता है न स्त्री से है न पुत्र से है न पुत्री से है न बहन से है न भाई से है न किसी मित्र से है न धन से हैं न वस्त्र से है बर्तन से है न हाथी घोडे बैल गाय भैंसादि से है न राज्य से है न हाट दुकान बाजार व नगर से है। हमारा अपना सम्बन्ध तो मात्र अपने आत्मीक गुणों से है, ज्ञान से, दर्शन से, अनन्तवीर्य से, सम्यग्दर्शन से, वीतरागता से, आनन्द से, अमूर्तीकपने से हमारा सम्बन्ध है जो सम्बन्ध कभी छूट नहीं सकता है। ऐसा सच्चा यकीन लाने से मेरा शरीरादि है यह ममकार मिट जाता है और अपने ही असली गुणों की संपत्ति से ममकार हो जाता है।

अग्रहीत मिथ्यात्व को समझ कर वमन करना चाहिए यह वह मिथ्या प्रवृत्ति है जो इसी देह में अपने कुटुम्ब की, व भुलावा देने वाले सम्बन्धियों की, व कुमित्रों की, व कुगुरुओं की, संगति से अपने में पैदा हो जाती है। मिथ्या श्रद्धा अपने में जम जाती है। जो हमें ऐसे भ्रम में डाल देती है कि हम फिर अग्रहीत मिथ्यात्व को कभी छोड़ ही नहीं सकते।

इसी लिये पं० दौलतरामजी ने छः ढाला में कहा है—

जो कुगुरुकुदेव कुधर्म सेव। पोषै चिर दर्शन मोह एव।
ताकू गृहीत मिथ्यात्व जान।

भावार्थ—जो मिथ्यादेव, मिथ्यागुरु व मिथ्या धर्म की सेवा करना है यह भीतरी मिथ्या बुद्धि को मजबूत कर देना है यही गृहीत मिथ्यात्व है।

इसके दूर करने का उपाय यह है कि हम सच्चे देव, सच्चे गुरु व सच्चे धर्म को समझावें और उनके सिवाय अन्य की कभी भक्ति न करें।

हम सब संसारी जीवों के भीतर दो मुख्य दोष हैं एक अज्ञान दूसरे क्रोधादि कषाय जिस किसी परमात्मा में अज्ञान हो न क्रोधादि कषाय हो अर्थात् सर्वज्ञ वीतराग हो वही पूज्यदेव हो सकता है। यह लक्षण जैनियों द्वारा माने गए सर्व अरहंत व सिद्धों में है- ये सब सर्वज्ञ वीतराग हैं श्रीऋषभदेव आदि महावीर पर्यंत चौबीस तीर्थंकर पहले अरहंत हुए जब शरीर सहित थे व उपदेश करते थे फिर वे ही शरीर से मुक्त हो सिद्ध हो गए इत्यादि जो-जो अरहंत व सिद्ध हो गये हैं वे सब सर्वज्ञ और वीतराग हैं हमारा प्रयोजन यह है कि हमारा अज्ञान व कषाय मिटे। हम जब ऐसे आदर्श देव का भजन, पूजन, मनन, ध्यान करेंगे तब हमारा अज्ञान व कषाय अवश्य घटेगा, हमारा भाव निर्मल होगा तथा इस आदर्श को देखकर व जानकर हम उसी आदर्श के समान होने का पुरुषार्थ कर सकेंगे। बड़े पहलवान का आदर्श शिष्यको पहलवान बनाता है, बड़े गवैय्ये का आदर्श शिष्य को गवैय्या बनाता है, बड़े व्यापारी का आदर्श शिष्य को व्यापारी बनाता है, बड़े जौहरी का आदर्श शिष्य को जौहरी बनाता है इसी तरह सर्वज्ञ वीतराग का आदर्श आत्माको ज्ञानी व वीतरागी बनाता है।

जैसे चित्रकार किसी नमूने के चित्र को सामने रखता है तब उसे देख देख कर जब तक वैसा ही चित्र न खिंच जावे तब तक उस चित्र का देखना बन्द नहीं करता है उसी तरह उस प्राणी को जो संसार से छूटकर परमात्मा होना चाहता है जब तक परमात्मा पद के निकट न पहुंचे तब तक यही आदर्श परमात्मा के सामने रखना चाहिए। किसी भी अज्ञानी व रागी द्वेषी देव को न पूजकर सर्वज्ञ वीतराग देव को ही भजना चाहिए।

श्री पद्मनंदि मुनि धम्म रसयाण में कहते हैं—

ए ए सव्वेदोसा जस्स ण विज्जंति छुह निसाईया।
सो होइ परमदेउजो णिस्सन्देहेण घेतव्वो ॥ १२० ॥

भावार्थ-जिसमें क्षुधा, तृषा, भय, राग, द्वेष, मोह, चिंता, रोग जन्म, जरा, मरण, निद्रा, खेद, पसीना, शोक, रति, मद, आश्चर्य ये १८ दोष नहीं हों उसी को सच्चा देव संदेह रहित मानना चाहिये।

जिय कोहो जिय माणो जिव माया लोह मोह जियभयओ।
जिय पच्छरो य जह्मा तम्हा णामं जिणो उत्तं ॥१२४॥

भावार्थ—उस देव को जिन या जिनेन्द्र इसी लिये कहते हैं कि उसने क्रोध, मान, माया, लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि दोषों को जीत लिया है।

लोयालोयविदराहु तह्मा णामं जिणस्स विराहुत्ति।
जह्मा सीयलवयणो तह्मा सो वुचए चंदो ॥ १२५ ॥

भावार्थ—वह परमात्मा देव लोक व अलोक को जानने वाले हैं इस लिये उस जिनेन्द्र को विष्णु भी कहते हैं। उस अरहंत के वचन शांति दायक होते हैं इसलिये उसको चंद्रमा भी कहते हैं। वही जिन चन्द्र पूजने योग है।

इसी तरह धर्म उसे ही मनना चाहिए जो अज्ञान और कपाय के त्याग का मार्ग बताता हो, जो कर्मों को काट के उत्तम सुख को प्रदान करे। जैसा पंडित दौलतराम जी ने छः ढाला में कहा है—

दोहा—तीन लोक में सार; वीतराग विज्ञानता।
शिव स्वरूप शिवकार; नमहु त्रियोग सम्हारि के॥

भावार्थ—तीन लोक में सार एक वीतराग विज्ञानता है यही धर्म आनन्दकारक है व मोक्षदायक है इसे मैं मन वचन काय से नमस्कार करता हूं। रागद्वेष छोड़ के अपने आत्मा को परमात्मा रूप मानके शुद्ध आत्मा का श्रद्धान, ज्ञान व उसी का चरित्र अर्थात शुद्ध आत्मा ध्यान ही धर्म है। यही जैन धर्म है, इसी उपाय से परमानन्द होता है, पाप छूटता है आत्मा शुद्ध होती है, बड़े २ तीर्थंकर, चक्रवर्ती आदि इसी धर्म से शुद्ध हुए हैं

इसके विरुद्ध वह सब कुधर्म है जिससे क्रोधादि कपाय या रागद्वेष की बढ़वारी हो व जो आत्मज्ञानसे विमुख हो, रागी-द्वेषी देवकी पूजा भक्ति कुधर्म है। क्यों कि रागद्वेषको बढ़ाने वाली है। किसी को सताना कुधर्म है क्यों कि यह द्वेष बिना होता नहीं।

इसी तरह गुरू वही है जो रात दिन अज्ञान व कपाय मेटने का उद्यम करता हो। ऐसा साधु जो धन-धान्य, मकान भूमि, आदि परिग्रह का त्यागी होकर निरन्तर आत्मा का ध्यान करे, समता भाव सहित हो, गाली सुनकर मनमें क्रोध न लावे, सोही सच्चा गुरू है। श्री समन्त भद्राचार्य रत्नकरंड श्रावकाचार में कहते हैं—

विषयाशा वशातीतो निरारंभो ऽपरिग्रहः।
ज्ञान ध्यान तपो रक्तस्तपस्वी सः प्रशस्यते ॥१०॥

भावार्थ-जो पाचों इन्द्रियों की आशा के वशमें न हो, आरम्भ व परिग्रह रहित हो, ज्ञान ध्यान तपमें लीन हो, वही तपस्वी गुरुहोता है।

परिग्रह धारी संसार की वासनाओं में लीन साधु को कभी गुरु न मानना चाहिये ये कुगुरु पत्थर की नाव के समान हैं आप भी डूबेंगे व दूसरों को भी डुबायेंगे।

ऐसा जान कर हे भाई व बहनों! गृहीत मिथ्यात्व को छोड़ो, कुदेव कुगुरु कुधर्म की श्रद्धा छोड़ कर सच्चे देव, गुरु व धर्म पर श्रद्धा न लाओ। इसी भक्ति से अनादि काल का चला आया हुआ मिथ्यात्व फट सकेगा और तुम संसार में दुःखी न रहोगे। बहुत से भाई संसारी प्रयोजन के लिये देव मूढ़ता, पाषण्ड मूढ़ता, व लोक मूढ़ता में फंस जाते हैं और मिथ्यात्व का सेवन करने लग जाते हैं, वे समझते हैं कि रागी द्वेषी देवी देवता भी हमारा संकट टाल सकते हैं। परन्तु यह उनकी समझ ठीक नहीं है, कोई देवी देवता किसी को भला या बुरा बिना अपने पुण्य या पाप के नहीं कर सका है यदि कोई देवी-देवता धन देते हों तो सब ही धनवान हो जावें, यदि पुत्र देते हों तो सब ही भक्त पुत्रवान हो जावें, यदि रोग दूर करते हों तो सब ही लोग निरोगी हो जावें। परन्तु देखने में आता है कि बहुत से देवी देवताओं के भक्त अपना मतलब नहीं निकाल सकते हैं, रोगी होते हुए मर जाते हैं, धन चला जाता है, कुटुम्ब वियोग हो जाता है। सर्व जीव अपने पुण्य के फल से सुखी व पाप के फल से दुःखी होते हैं। जगत् में अनेक रागी द्वेषी देवों की मान्यता पड़ जाने का कारण देव मूढ़ता है लौकिक प्रयोजन साधने को बहुत से देवों की स्थापना करदी जाती है कि लोग पूजेंगे इस लिये धन व फल व मिष्टान्न जो वे चढ़ायेंगे सो मिल जावेंगे। लोगों की श्रद्धा जमने का कारण एक भ्रम है। वह यह है कि जब १०० आदमी किसी। देव से यह करते कह गये कि ... काम सिद्ध होगा तो हम इतने

का प्रभाव पड़ाएँगे। तब तो पापी होवे नहीं, तो पापों का उदय हो गया—दुःख तो अपने पुण्योदय से बाहरी प्रभाव से—मनु ये मान लेते हैं कि यह करामात अमुक देव देवी की है वे इस झूठी मान्यता का ढिंढोरा पीटते हैं जिससे धीरे २ ढोंगी मत होते चले जाते हैं।

इस मूढ़ता फैलने का एक दृष्टांत यह है कि एक दूर यह बालक बहुत से फूल लिए हुये गावों को जा रहा था मार्ग में साथ छोटा था, उसको मल की हाजत हुई पिता ने सड़क के किनारे बिठा दिया। बाद में उस मल पर फूल डाल दिये कि किसी को बुरा न लगे। पीछे जो लोग आए उन्होंने समझा कि यहाँ फूल चढ़े हैं कोई देवता होगा। धीरे २ फूलों का ढेर लग गया सबने मान्यता माननी शुरू कर दी किसी की मान्यता उनके पुण्य उदय से पूरी हुई माने यह लिया गया कि उस फूल देवता ने काम कर दिया। इस तरह उस मिथ्या को फूल देवता के नाम से मान्यता फैल गई। एक दफे एक बुद्धिमान ने विचारा कि इसके नीचे देखना चाहिये क्या है जो देखता है तो मल को पाता है आप भी लज्जित होता है व चढ़ाने वाले भी इस बात को जान कर लज्जित हो जाते हैं।

यदि हमें गृहस्थी में रोग, शोक, वियोग का कष्ट हो तो हमें उस पाप के नाश करने के लिये यत्न करना चाहिये। वह यत्न ये है सच्चे देव धर्म गुरुकी सेवा करके वीतराग भावको बढ़ाना सच्चे धर्म सेवन से पाप कट जाता है, जो भारी हो तो नहीं भी कटता है भारी पाप को तो भोगना पड़ता है वह कटता नहीं शेष मध्यम व जघन्य पाप कट सक्ता है। इस लिये हमें अपने गृहस्थी के संकटों को हटाने के लिये भी पाप के दूर करने का ही उपाय करना चाहिये यह सच्चे देव धर्म गुरु का सेवन है, जाप है, आत्म ध्यान है, व्रत उपवास

का

जैसे किसी को रोग हो तो उसके दूर करने लिए हम को उचित उपाय ही करना ठीक है। हम शुद्ध जड़ी बूटी आदि की दवाई ही देंगे, मांस शराब को कभी नहीं खिलाएं व पिलाएंगे। इसी तरह संकटों के दूर करनेके लिए हमें बाहरी पुरुषार्थ करते हुए भीतर पाप शमन के लिए सच्चा धर्म सेवना चाहिए। राग द्वेष से पाप कर्म बंधता है, वीतरागता सहित धर्म की भक्ति से पाप कर्म कट जाता है। मिथ्या धर्म के सेवन से व रागी द्वेषी देवों की भक्ति से तो उलटा पाप बंध जाएगा छूटेगा नहीं। हमें तीन मूढ़ताओं से बचना चाहिए। श्री रत्नकांड श्रावकाचार में कहा है—

देव मूढ़ता—

वरोपलिप्सयाशावान राग द्वेष मलीमसाः।
देवता यदुपासीत देवता मूढ़ मुच्यते ॥ २३ ॥

भावार्थ—किसी वस्तु के पाने की इच्छा करके रागी द्वेषी देवताओं को पूजना देव मूढ़ता कही जाती है।

अज्ञानी लोग माता शीतला, काली, दुर्गा भैरों, भवानी आदि के मंदिरों में भक्ति पूजा अपनी लौकिक इच्छा को लेकर करते हैं। कोई २ बरगद, पीपल, को भी देव मानकर पूजने लगते हैं कोई गौ, घोड़ा, आदि को पूजते हैं मुसलमानों के ताजियों को पूजते हैं। शीरनी चढ़ाते हैं और

जो अपना सच्चा हित करना है उन्हें भूल उन सब की भक्ति नहीं करनी चाहिए। ब्याह शादी में व मकान के मुहूर्त्त में व और लौकिक के लिए पाप काटने के लिए धर्म के लिए श्री साधु व जिन ... कहा है—

यएणतोधम्यो मगंलं ।

गुरू मूढ़ता—

सग्रंथारंभ हिंसानां संसारावर्त्त वर्त्तिनाम् ।
पाखंडिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखंडि मोहनम् ॥२४॥

भावार्थ—परिग्रह आरम्भ व हिंसा में प्रवर्तने वाले संसारके जाल मे फंसे हुए साधुओं की पूजा करना गुरुमूढ़ता है। जगत मे बहुत से महन्त गद्दीधर ऐसे बन बैठते हैं जो तरह २ का लोभ बता कर खूब पैसा भक्तों से लेते हैं व आप विषय भोगों में खोते हैं। कोई२ किसी मन्त्रादिके प्रभावसे कोई लौकिक चमत्कार बताकर भक्तोंको भुलावे में डाल देते हैं। मूढ़ स्त्री पुरुष उनकी भक्ति करके खूब ठगे जाते हैं ज्ञानी को ऐसे गुरुओं से बचना चाहिए।

लोक मूढ़ता—

आपगा सागर स्नान मुच्चयः सिकताश्मनाम् ।
गिरि पातोऽग्नि पातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥२२॥

भावार्थ—लोगों के कहने से देखा देखी नदी व सागर के स्नान में धर्म मानना पत्थरों के ढर करने में, पर्वत से गिरने में, अग्नि से जलने में धर्म मानना सब लोक मूढ़ता है। मूढ़ताके वश होकर बहुत से लोक मूढ़तायें की जाती हैं जैसे दिवाली के दिनों में दीवाल पर होई बनाकर पूजनी, रुपयों की थैली को पूजना हाथी मुख गणेश व लक्ष्मी देवी को पूजना दशहरे में गोबर के पुतले को पूजना सलोने में दीवालों में चित्र बनाकर पूजना विवाह सादी में चाक कूर्या पूजना दुकान की देहली को पूजना कलम दवात को पूजना तलवार को पूजना कबर पर चद्दर चढ़ाना किसी के मरण होने पर उसके निमित्त गऊ दान करना

ांड दान करना मरने वाले को पहुंचेगा इस भाव से श्राद्ध करना ये सब लोक मूढ़ता है ।

जिस प्रकारके पूजनादि से व्यर्थ पैसा बरबाद हो, मिहनत खर्च हो पाप का बंध हो और लाभ कुछ न हो उस सबको मूढ़ता कहते हैं। देवगुरु व लोक मूढ़ता ऐसा भयंकर अंधेरा है कि उस में पड़कर जगत के प्राणी मिथ्यात्व का सेवन करके अपना घोर बुरा करते हैं अपने संसार को बढा लेते हैं उन्हें कभी सम्यग्दर्शन का लाभ नहीं होसक्ता। दुनिया में मिथ्यात्व का बड़ा भारी प्रचार है लोग सुख पाने के लिये मूढता से देवी देवताओं के नाम पर पशुबलि करते हैं यह सब मूढ़ता है क्या कोई ईश्वर या देवी देवता पशुओं के घात से प्रसन्न होसकता है ? क्या वह पशुओं का भी मालिक नहीं है ।

यदि आप अपना कल्याण करना चाहें तो सब तरह के मिथ्या पूजन पाठ को छोड़दें-न करवा चौथ का व्रत करें, न चंद्रमा को देखकर रात्रि को खावें दिन मे भूखे रहकर रात्रि को खाना धर्म नहीं होसकता है ।

प्यारे भाई व बहनों! जैनधर्म को जानो, पहचानो, देखो तो पता चलेगा कि वीतराग सर्वज्ञ देव, निर्ग्रंथ गुरु व अहिंसा मई वीतराग धर्म ही पूजन भजन करने योग्य है। रागी द्वेषी देव गुरु धर्म की भक्तिगृहीत मिथ्यात्व है जो अगृहीत मिथ्यात्व को दृढ करने वाले हैं। वृथा ही भ्रम में पड़कर मिथ्यात्व का सेवन कर मानव जन्म को निरर्थक न खोना चाहिये।

सम्यग्दर्शन की सेवा से ही कल्याण होगा। इस लिये सच्चे देव गुरुधर्म को समझकर नित्य प्रति गृहस्थ के छः कर्म पालो। (१) रोज सवेरे उठकर आतम ध्यान करते हुये सामायिक करो. णमोकार मंत्र का जाप दो ।

(२) स्नानादि करके श्रीजिनमंदिरजी जाकर श्रीजनेन्द्रदेव की शांत मुद्रा का दर्शन पूजन करो।

(३) वीतरागी गुरु हों तो उनकी भक्ति करके उपदेश ग्रहण करो।

(४) शास्त्र को शांत चित्त हो थोड़ी देर पढ़ो सुनो विचारो।

(५) संयम व नियम रखो संयम से रहो नियम व प्रतिज्ञा लेकर इच्छाओं को रोको।

(६) नित्य प्रति दिन दान देकर भोजन करो धर्मात्माओं को भक्ति पूर्वक दान करो व दुःखित बुभुक्षित दीनों को दया पूर्वक दान करो। सन्ध्या के समय भी आत्म ध्यान करो, शास्त्र पढ़ो परोपकार करो अपने भावों में सम्यक्त रत्न को धारण करो, अपनी आत्मा में विश्वास करते हुए आत्म पद पाने का यत्न करो आत्मीक आनन्द का भोगो, पुण्य पापके फलमें समता भाव रखो, राग द्वेष न करो। इस तरह दान धर्म शुद्ध पूजन पाठादि व ध्यान से बड़े २ पाप कट जाते हैं। प्राचीन काल में अनेक स्त्री पुरुषों ने संकट के समय जिनधर्म का ही आराधन किया था। कभी मिथ्यात्व का सेवन नहीं किया था सीताजी वन में पटके जाने पर जिन धर्म का ही आराधन करती थी। सुलोचना सती पती पर संकट आने पर जिनेन्द्र का ही पूजन ध्यान करती थी रेवती रानी भूलकर के भी सिवाय जिनेन्द्र के किसी को नहीं पूजती थी।

इस लिये शुद्ध मन करके मूढता को बिलकुल विदा करो व्यवहार और निश्चय साम्यदर्शनको शास्त्र द्वारा जानकर इसीका आराधन करो, मिथ्यात्व विष है, सम्यक्त अमृत है, मिथ्यात्व को छोड़कर सम्यद्दर्शन का ही आराधन करो इसी से इस जन्म में व परजन्म में सुख होगा।

१-७-३२

ब्र० सीतल

मंडल के निम्न लिखित ट्रैक्ट समाप्त हो चुके हैं इन ट्रैक्टों की मांग बराबर आती रहती है और इनके अतिरिक्त इस समय भी मण्डल के पास कई ट्रैक्ट प्रकाशित करने के वास्ते मौजूद हैं, किन्तु इनके प्रकाशित करने के लिये द्रव्य की अति आवश्यकता है। जो महाशय ट्रैक्टों के प्रकाशित कराने के अमूल्य धन से सहायता करेंगे। उन दानी महानुभावों के शुभ नाम धन्यवाद पूर्वक ट्रैक्टों पर प्रकाशित किये जायेंगे। हमें पूर्ण आशा है कि जैन-धर्म-प्रेमी इस शुभ कार्य में हमारा हाथ बटायेंगे। और दान करते समय अवश्यमेव संस्था का ध्यान रखेंगे।

१ अहिंसा, ब्र० शीतलप्रसाद जी मुफ्त
२ जैनधर्म का महत्व स्वर्गीय बाबू ऋषभदासजी वकील मेरठ,,
३ रेशम के वस्त्र, बाबू ज्योतिप्रसादजी देवबन्द हिन्दी ,,
४ जैनधर्मफिलासफी, स्व० बाबू ऋषभदासजी वकील ,, —)
५ सुख कहां है, बाबू ज्योतिप्रसादजी देवबन्द ,,)।
६ खुलाशा मजाहिब, ला० सुमेरचन्द अकाउटेन्ट ,,)॥
७ ब्रह्मचर्य, बाबू ऋषभदासजी वकील ,,)।
८ शहरे निजात, बाबू चांदूलाल जैन अख्तर ,,)॥
९ मोहजाल बाबू ज्योतिप्रसाद जी ,,)।
१० भगवान् महावीर के जीवन की झलक
राय ब० जुगमन्दिरदास बैरिस्टर ,,)॥
११ क्या ईश्वर खालिक है, बाबू ज्योतिप्रसादजी ,,)
१२ ज्ञानसूर्योदय दूसरा भाग, बाबू सूरजभान वकील ,, —

१३ रहनुमा उर्दू जैनधर्मदर्पण, ब्र० वा० ऋषभदासजी व
१४ आरज़ूये गैरवार बा० भोलानाथजी,, उर्दू
१५ जैन कनसेपशन, बा०चम्पतरायजी बरिस्टर, अंग्रेजी
१६ जिनेन्द्र-मतदर्पण प्रथम भाग ब्र० शीतलप्रसादजी, हिं
१७ प्राक्टिकल जैनेजम, चम्पतरायजी बैरिस्टर, अंग्रेजी
१८ जैनधर्मको अहमत, बा० ऋषभदासजी वकील उर्दू -)
१९ लार्डमहावीरा, हरिसत्य भट्टाचार्य अंग्रेजी ≡)
२० लार्डमहावीरा बाबू कामता प्रसाद जी " ।)
२१ जैनधर्म ही भूमण्डल का सार्वजनिक धर्म सिद्धान्त हो
सकता है बाबू माईदयालजी बी ए. आनर्स, हिन्दी)॥।
२२ खयालातेतौफ़, बाबू भोलानाथ जी मुख्तार उर्दू मु०
२३ जैन-धर्म, महर्षि शिवव्रतलाल जी बर्मन " ।/
२४ लार्ड पार्श्वनाथ, मि० हरिसत्य भट्टाचार्य एम.ए.बी,एल,उ० ।)
२५ अहिंसा धर्म पर बुजदिली का इल्जाम बा० शिवव्रतलालउ०)॥
२६ मिथ्यानिषेध या सची श्रद्धा ब्र० शीतलप्रसाद जी हिन्दी
२७ रूहानी तरक्की राराज बा० ज्योति प्रसाद देवबन्द -)॥।

भवदीय—

मन्त्री-जैन मित्र मण्डल

धरमपूरा देहली ।

श्री तेरापंथ किशोर मंडल
बीकानेर
जैन दर्शन में
तत्त्व-मीमांसा
—मुनि नथमल